सृजनात्मकता, दृश्यकला एवं गेस्टाल्टवादी विचारधारा
एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रतिभा*

कला समीक्षा, सौंदर्यानुभूति, सृजनात्मकता आदि प्रक्रियाएँ मानव की संज्ञानात्मक क्रियाओं से संबद्ध होती हैं। आधुनिक युग के अनेक विद्वानों ने मनोविज्ञान के अध्ययनों में सृजनात्मकता के संज्ञानात्मक आधार पर अपनी विचारधाराएँ स्थापित की हैं। यह शोध संज्ञानात्मक विचारधाराओं के अंतर्गत एक प्रमुख विचारधारा गेस्टाल्टवाद का दृश्यकला के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन को इंगित करता है। गेस्टाल्टवादी विचारधारा का मत है कि मनुष्य किसी भी आकार को अलग-अलग इकाइयों के रूप में न देखकर पूर्णता के साथ देखता व अनुभव करता है। जो केवल प्रत्यक्षण ही नहीं, बल्कि मानव अधिगम, स्मृति और विचार आदि को भी प्रदर्शित करता है। इस शोध अध्ययन में विभिन्न दृश्यकला चित्रों का विश्लेषण इसी विचारधारा के संदर्भ में किया गया है।

प्रस्तावना

मानव जीवन में कला शिक्षा का विशेष स्थान होता है। इसके महत्व को उजागर करते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा— 2005 में स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है कि 'हम कला के महत्व की अधिक समय तक उपेक्षा नहीं कर सकते और हमें बच्चों में कला संबंधी जागरूकता व रुचि के प्रसार-प्रोत्साहन के लिए सारे संभावित संसाधन और सारी ऊर्जा लगा देनी चाहिए। हमारे देश में कला, धर्मनिरपेक्षता और सांस्कृतिक विविधता का जीता-जागता उदाहरण है। उसमें देश के हर भाग के लोक और शास्त्रीय गायन, नृत्य, संगीत, पुतले बनाना, मिट्टी का काम आदि शामिल हैं। इनमें से किसी भी कला का अध्ययन हमारे युवा विद्यार्थियों के ज्ञान को न केवल समृद्ध करेगा, बल्कि वह स्कूल के बाहर भी जीवन भर उनके काम आएगा।

दृश्य और प्रदर्शन, दोनों ही कलाओं को पाठ्यचर्या में शिक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाए जाने की ज़रूरत है। बच्चे इन क्षेत्रों में केवल मनोरंजन के लिए ही कौशल हासिल न करें, बल्कि और भी दक्षताएँ विकसित करें। कला की पाठ्यचर्या के द्वारा विद्यार्थियों को देश की विविध कलात्मक परंपराओं से परिचय करवाना चाहिए। कला शिक्षा आवश्यक रूप से एक उपकरण और विषय के रूप में शिक्षा का

* *अतिथि शिक्षिका*, शिक्षा विभाग, शिक्षा निदेशालय, दिल्ली सरकार, दिल्ली
302, वृंदावन ग्रीन अपार्टमेंट, जी.टी. रोड, साहिबाबाद, गाज़ियाबाद 201 005

Chapter 3.indd 32 7/3/2018 5:00:28 PM

हिस्सा (कक्षा 10 तक) हो और हर स्कूल में इससे संबंधित सुविधाएँ हों। कला के अंतर्गत संगीत, नृत्य, दृश्यकला और नाटक चारों को शामिल किया जाना चाहिए। कला के महत्व के संबंध में अभिभावकों, स्कूल अधिकारियों और प्रशासकों को अवगत कराए जाने की ज़रूरत है। कला शिक्षण में ज़ोर सीखने पर हो, न कि सिखाने पर और इसमें दृष्टि सहभागिता पर आधारित हो।'

विद्यालयी शिक्षा के दौरान, हर स्तर पर, कला के विविध माध्यम और स्वरूप बच्चों को खेल-खेल में तथा विषयबद्ध रूप में विकसित होने में मदद करते हैं, उन्हें अभिव्यक्ति के कई रास्ते सिखाते हैं। संगीत, नृत्य और नाटक विद्यार्थियों के आत्मबोध, उनके ज्ञानात्मक और सामाजिक विकास में सहायक होते हैं। पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक स्तरों पर ये सभी कलाएँ बेहद महत्वपूर्ण हैं। बच्चे भाषा, प्रकृति के रूपों की खोज, स्वयं की और अन्य की समझ आदि को कला के माध्यम से आसानी से विकसित कर सकते हैं। कला की प्रवृति ही ऐसी होती है कि सभी बच्चे उसमें भागीदारी कर सकते हैं।

कला और विरासत शिल्पों को शिक्षा से जोड़ने के संसाधन हर स्कूल में उपलब्ध होने चाहिए। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि पाठ्यचर्या में कला गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय हो। नाटक-नृत्य, मूर्तिकला संबंधी कक्षाओं के लिए घंटे-डेढ़-घंटे का समय चाहिए। ज़ोर इस बात पर नहीं हो कि बच्चे वयस्कों के मानकों के हिसाब से कला सीखें या पूर्ण कला का विकास हो, बल्कि कला-शिक्षा के माध्यम से बच्चे को अपने आप विकसित होने का मौका दिया जाए, उन पर अधिक दबाव न डाला जाए। कुछ सालों में शिक्षक की सहायता से विद्यार्थी अपने समर्पण व मेहनत से स्वतंत्र कला परियोजनाएँ प्रस्तुत कर पाएँगे, जिसके साथ उनमें सौंदर्यबोध, गुणवत्ता व श्रेष्ठता भी पनप सकेगी।

स्कूलों में माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर कला पाठ्यचर्या के अंतर्गत विद्यार्थी को अपनी रुचि की किसी भी कला में विशेषज्ञता लेने दी जाए। कला की तालीम लेते और उसका अभ्यास करते समय विद्यार्थी इस उम्र तक कला व सौंदर्यबोध के संबंध में कुछ सैद्धांतिक ज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं, जो ज्ञान के इस क्षेत्र के महत्व को गहराई से समझने में मदद करेगा। लोकप्रिय कला चर्चा में सहभागिता करने पर विभिन्न प्रकार की कला-परंपराओं एवं रचनात्मकता की विधाओं से विद्यार्थियों को उनकी अलग-अलग रुचियों एवं परंपराओं की जानकारी भी मिल सकेगी। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि पाठ्यचर्या में उच्च या निम्न कला का उल्लेख न हो, उसमें शास्त्रीय और लोक कला का भेद न हो। इससे वे विद्यार्थी भी तैयार हो सकेंगे जो बारहवीं के लिए कला का विशेष अध्ययन करना चाहते हैं या आगे कला को ही अपना व्यवसाय बनाना चाहते हैं।

वस्तुतः 'सौंदर्य एवं कला के विभिन्न रूपों को समझना व उसका आनंद उठाना, मानव जीवन का अभिन्न अंग है। कला, साहित्य और ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में सृजनात्मकता का एक-दूसरे से घनिष्ठ संबंध है। बच्चे की रचनात्मक अभिव्यक्ति और सौंदर्यात्मक आस्वादन की क्षमता के विस्तार के लिए साधन और अवसर मुहैया कराना शिक्षा का अनिवार्य कर्त्तव्य है।

अतः कला शिक्षा पर शिक्षकों को अधिक संसाधन सामग्री दी जाए। शिक्षक-प्रशिक्षण और उन्मुखीकरण में कला से संबंधित महत्वपूर्ण अवयव होने चाहिए ताकि शिक्षक दक्षता से और रचनात्मक ढंग से कला का शिक्षण कर सकें। साथ ही, बाल भवनों को सभी ज़िला और खंड स्तर पर स्थापित किया जाए। इससे कला और शिल्प संबंधी ज्ञान और अनुभव का अतिरिक्त विकास हो सकेगा और बच्चों को किसी कला को प्रत्यक्ष रूप से सीखने का अवसर मिल सकेगा। इसके परिणामस्वरूप उनमें सृजनात्मकता का आविर्भाव भी हो सकेगा।

समीक्षात्मक रूप में देखा जाए तो सौंदर्यशास्त्र की मनोविश्लेषणात्मक परंपरा कला समीक्षा के क्षेत्र में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। सौंदर्यशास्त्रियों ने कला समीक्षा के लिए अनेक दृष्टिकोण दिए। कभी उन्होंने चित्रों की समीक्षा उनके भौतिक स्वरूप के आधार पर की, कभी उससे उत्पन्न होने वाली मानसिक प्रक्रियाओं के आधार पर। किंतु गेस्टाल्टवादी विचारधारा में कलाकार की मानसिक अवस्था को ही अध्ययन का आधार बनाया गया। विद्वानों ने यह माना कि मनोवैज्ञानिक युग में चित्र देखना, समझना, अनुभव करना या आनंद प्राप्त करना, इन सभी की प्रक्रिया एक समान ही होती है अर्थात् कलाकार अपनी चित्र रचना में जिस मानसिक प्रक्रिया से गुज़रता है, दर्शक भी उसी प्रक्रिया से गुज़रता है और इनका मानना है कि यदि दर्शक कलाकार के समान उस मानसिक प्रक्रिया से गुज़रेगा, तभी वह उस चित्र का यर्थाथ आनंद ले पाएगा।

गेस्टाल्टवादी विचारधारा

यह आधुनिक मनोविज्ञान की प्रमुख विचारधाराओं में से एक है। आधुनिक काल में प्रायः सभी विद्वानों ने मानव जीवन के विविध पक्षों को आधार बना कर मनोविज्ञान संबंधी विचार प्रतिपादित किए हैं। आधुनिक मनोविज्ञान का विकास लगभग 20वीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है, 1860 के बाद अनेक विचारधाराओं का आविर्भाव हुआ। इस दृष्टि से वर्ष 1860 के बाद से 1905 तक का समय भी संपूर्ण विश्व में अत्यंत महत्वपूर्ण काल रहा। पश्चिम में प्रायः सभी आधुनिक कला के आन्दोलनों, जैसे— प्रभाववाद, उत्तरप्रभाववाद, धनवाद, फाववाद, सुरीलवाद आदि, सभी इस समय मौजूद थे। यदि भारतवर्ष के संदर्भ में देखें तो इसके समकालीन बंगाल शैली के कलाकार कार्य कर रहे थे और उनके साथ ही आनंदकुमार स्वामी, ई.बी. हैवेल, अरविन्द घोष, रविन्द्रनाथ ठाकुर, विनोद बिहारी मुखर्जी, असित कुमार हल्दर आदि कलाकार कला संबंधी प्रयोग कर कला सौंदर्य पर अपने विचार व्यक्त कर रहे थे।

इसी प्रकार, जर्मनी में भी अनेक विद्वान इस दौरान कार्य कर रहे थे और उसी दौरान वाटसन नामक विद्वान ने व्यवहार संबंधी अपने विचार प्रस्तुत किए। इसी दौरान बर्लिन विश्वविद्यालय के तीन नवयुवकों वर्दीमर, कोहलर और कोफ्का ने अपने अध्ययनों के आधार पर गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की नींव रखी। इन मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार मानव मन अत्यंत जटिल एवं अर्थपूर्ण होता है और किसी भी व्यक्ति के जीवन में उसका अंतर्दर्शन बहुत महत्वपूर्ण होता

है। इन विचारकों ने मानव मस्तिष्क को संज्ञानात्मक रूप से समझते हुए तार्किक दृष्टि से बौद्धिक पृष्ठभूमि को समझने की चेष्टा की। लगभग 1910 से 1912 तक इन लोगों ने चलचित्रों के मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर प्रयोग किए। इसके लिए इन्होंने कैमरे से अलग-अलग आसनों में चित्र लिए। प्रत्येक चित्र अपने आप में स्थिर होता है और इसके लिए इन्होंने कुछ प्रयोग किए थे। यदि दो चित्रों को कुछ समयांतराल से दिखाया जाए तो वे दो अलग-अलग चित्र दिखते हैं, किंतु यदि दोनों चित्रों को इतना जल्दी दिखाया जाए कि बीच में समयांतराल न हो तो वे एक ही चित्र के समान दिखते हैं। वर्दीमर ने अपने प्रयोग के द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि एक के बाद दूसरा, फिर तीसरा और इसी प्रकार कई चित्र जब जल्दी-जल्दी दिखाए जाते हैं तो चलने का आभास होता है।

यद्यपि इन चित्रों में किसी भी वस्तु में गति नहीं होती और न ही परदे पर दिखाए जाने पर उनमें गति आती है। परंतु जब उन्हें परदे पर दिखाते हैं, तब दो चित्रों के बीच में से प्रकाश हटा दिया जाता है, तो उस अंतर को दर्शक समझ नहीं पाते हैं। परिणामस्वरूप देखने वाले को गति का आभास होता है।

इसी प्रकार, उन्होंने रेखाओं को लेकर भी प्रयोग किए थे। जैसे कि दो रेखाएँ साथ-साथ खींची गईं और उनके कोने विपरीत दिशा में कर दिए गए तो उससे एक नये प्रकार के भ्रम का या गति का भाव उत्पन्न होता है।

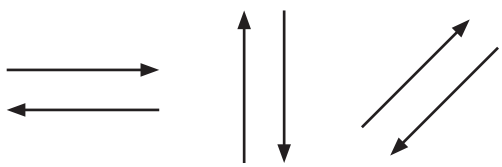

वर्दीमर का मानना था कि इस प्रकार रेखाओं में गति स्पष्ट या प्रत्यक्ष दिखाई देती है और गति संवेदना का अंग है। इन प्रयोगों के आधार पर गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि रेखाओं के प्रयोग में पूर्णता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। आकार की पूर्णता को ही इन मनोवैज्ञानिकों ने गेस्टाल्ट का नाम दिया।

गेस्टाल्ट शब्द अंग्रेज़ी भाषा के शब्द गेस्टाल्टेन (*Gestalten*) तथा जर्मन भाषा के शब्द गेस्टाल्टेन के समान है। किसी भी वस्तु के ज्ञान को जो उसके आकार, रंग, रूप, गति आदि के द्वारा होता है, को गेस्टाल्टेन कहा जाता है, जिसका अर्थ है — रूप (form) तथा पूर्ण (whole)। जर्मन भाषा में गेस्टाल्ट शब्द निम्न दो अर्थों में प्रयुक्त होता है —

1. किसी भी पदार्थ के रूप में उसका आकार— इस अर्थ में त्रिभुज की त्रिभुजकारिता, चतुर्भुज की चतुर्भुजकारिता, कुर्सी, मेज़, फूल, पत्ती आदि के संपूर्ण आकार को गेस्टाल्ट कहेंगे।
2. गति के क्रम को भी गेस्टाल्ट कहते हैं, जैसे— नाचना, दौड़ना, चलना आदि।

अतः गेस्टाल्ट शब्द का प्रयोग धर्म और धर्मी (कर्म और कर्ता) दोनों अर्थों में किया जाता है और इन्हीं पर आगे प्रयोग करते हुए गेस्टाल्टवादियों ने कुछ सिद्धांतों अथवा नियमों की स्थापना की। प्रयोगों के आधार पर स्थापित नियम निम्नवत हैं—

समीपता का नियम

यह नियम बताता है कि जब कोई व्यक्ति पृष्ठभूमि में किन्हीं चिह्नों को देखता है और वे चिह्न एक क्रमबद्ध रूप धारण किए हुए होते हैं तो उनका कोई

अस्तित्व नहीं होता, परंतु यदि उन्हें पास लाया जाए तो वे एक-दूसरे को अर्थ प्रदान करते हैं। चित्र 1 का अवलोकन करने से इस नियम का बोध स्वतः हो जाता है।

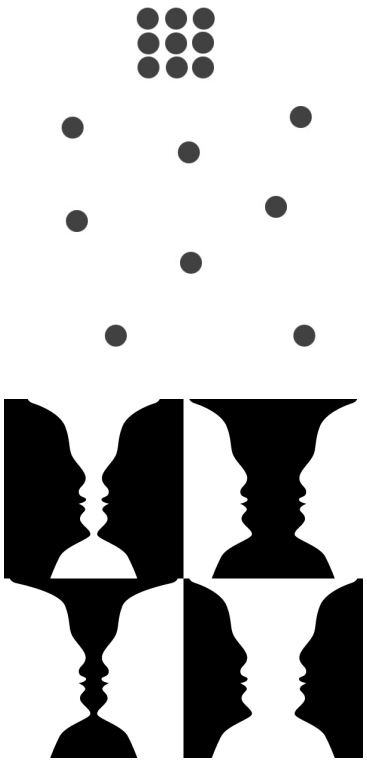

चित्र 1

समानता का नियम

समानता का नियम बताता है कि जो वस्तुएँ आपस में समान होती हैं, यदि वे किसी भी समूह में स्थिर हैं तो वे अपने रूप को उस समूह में स्पष्टता प्रदर्शित कर देती हैं। चित्र 2 में इस आशय का बोध स्पष्ट होता है।

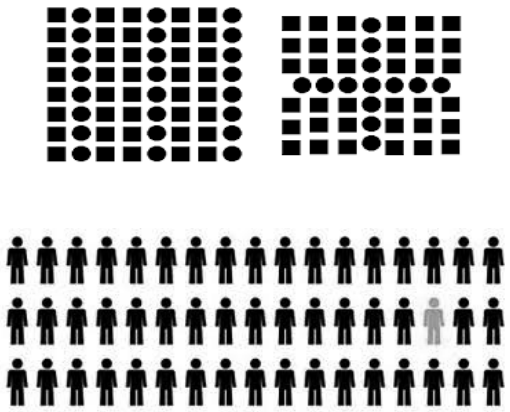

चित्र 2

पूर्णता का नियम

यह नियम स्पष्ट करता है कि किसी वस्तु में यदि अंतराल है या रिक्त स्थान है या उसके हिस्से कटे हुए हैं, तो प्रत्यक्षीकरण के द्वारा क्षतिपूर्ति के सिद्धांत के आधार पर पूर्ण आवृति में भरे हुए दिखाई देते हैं। चित्र 3 का अवलोकन करने से इस नियम का बोध होता है।

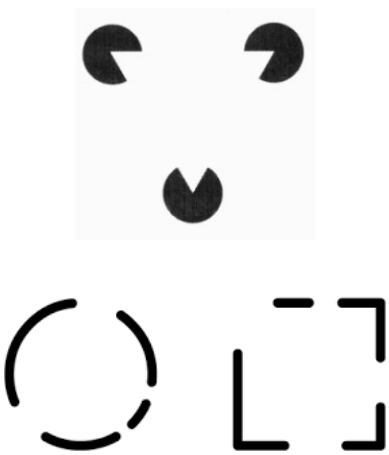

चित्र 3

निरंतरता का नियम

यह नियम इस बात का बोध कराता है कि जिन उत्तेजनाओं के साथ एक दिशा में जाने या आने की निरंतरता देखी जाती है तो व्यक्ति उन्हें एक समूह में संगठित करके प्रत्यक्षीकरण करता है। चित्र 4 में इस आशय का बोध स्वतः स्पष्ट होता है।

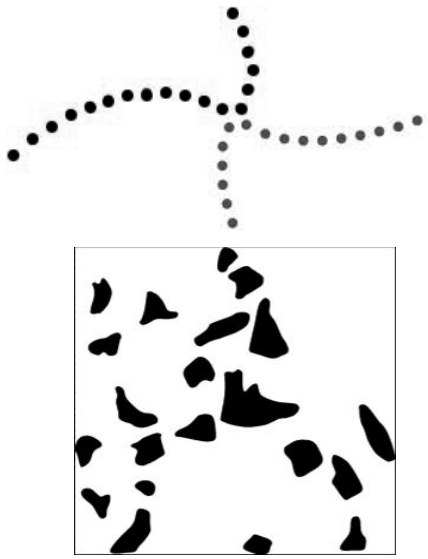

चित्र 4

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान और दृश्यकला

कोफ्का, कोहलर और वर्दीमर नामक मनोवैज्ञानिकों को गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का जनक माना जाता है। यद्यपि, उन्होंने कला पर सीधे-सीधे फ़ोकस नहीं किया था, किंतु उनके विचार कला से नज़दीक से जुड़े हुए हैं। गेस्टाल्ट विचारधारा में यह माना गया कि मनुष्य किसी भी आकार को अलग-अलग इकाइयों के रूप में न देखकर पूर्णता के साथ देखता और अनुभव करता है। गेस्टाल्ट मनोविज्ञान संज्ञानात्मक मनोविज्ञान के अंतर्गत कार्य करता है, जो केवल प्रत्यक्षण ही नहीं बल्कि मानव अधिगम, स्मृति और विचार आदि को भी प्रदर्शित करता है।

वर्ष 1940 में कोफ्का ने 'प्रॉब्लम इन द साइकोलॉजी इन आर्ट' नामक विषय पर व्याख्यान देते हुए अपने विचार प्रकट किए थे। कोफ्का का मानना था कि चित्र के द्वारा कला का रसास्वादन किया जा सकता है तथा कला एवं कला समीक्षा पर आधारित मूलभूत नियमों का आधार लेकर कला को प्रस्तुत किया जा सकता है। पहले कलाकृति या कोई भी कृति एक दृश्य रूप में प्रत्यक्षण के नियमों पर प्रकट होती है। दूसरा, इस क्रिया में भौतिक कलाकृति की उपस्थिति होती है अर्थात् जब किसी कलाकृति की बात करते हैं, तो दर्शक की चित्र के प्रति होने वाली मनोवैज्ञानिक क्रिया भी उसमें समाहित होती है।

कोफ्का का मानना है कि चित्र में वस्तु जैसी दिखती है, ज़रूरी नहीं कि यथार्थ में भी वैसी हो। यह चित्र में 'फ़िज़ियोनॉमी' गुण होता है। 'फ़िज़ियोनॉमी' गुण का अर्थ है, किसी के चेहरे की मुख मुद्राओं को समझना या प्रस्तुत करना। यह गुण किसी के चेहरे की खुशी या दु:ख को प्रस्तुत करता है। कोफ्का का मानना है कि फ़िज़ियोनॉमी चित्र की विशेषता होती है। उसका प्रत्येक चित्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान होता है, जैसे कि रंग आदि का होता है। फ़िज़ियोनॉमी विशेषतः स्वयं में विशेष गुण है, उसे किसी और वस्तु में नहीं बदला जा सकता है, जैसे— कोई दृश्य उदास या दुखी दिखाई देता है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि दृश्य चित्र वास्तव में उदास है, वरन् उस चित्र को देखकर हो सकता है कि हमें खुशी का

आभास उत्पन्न हो। उस अभिव्यक्ति में चित्र के संपूर्ण तत्व समाहित होते हैं। संपूर्णता की विशेषताएँ (Properties of whole) गेस्टाल्ट विचारधारा का मूल है, जैसे— बिंदुवाद के अंतर्गत जॉर्ज स्यूरा द्वारा निर्मित कृति *'अ संडे आफ़्टरनून ऑन द आइलैंड ऑफ़ ला ग्रेंडे'* (*A Sunday Afternoon on the Island of La Grande*). यह कृति रंगों के छोटे-छोटे बिंदुओं द्वारा निर्मित की गई है। पास से देखने पर बिंदु स्पष्ट रूप से दिखाई देते है। परंतु यदि इस कलाकृति को संपूर्णता के सिद्धांत पर देखा जाए तो एक सुंदर दृश्य हमारे सामने आता है और हम उस दृश्य का आनंद लेते हैं। चित्र 5 में संपूर्णता के इस सिद्धांत का आभास होता है।

गेस्टाल्ट विचाराधारा का एक अच्छा उदाहरण हेनरी मातिस (Henry Matisse) द्वारा निर्मित कृति 'ला डांसे' (*La Danse*) है जो कि गेस्टाल्ट विचारधारा के पूर्णता के नियम तथा निरंतरता के नियम पर आधारित है। पूर्णता के नियम के अनुसार किसी वस्तु में यदि अंतराल है या रिक्त स्थान है तो प्रत्यक्षीकरण के द्वारा क्षतिपूर्ति के सिद्धांत के आधार पर पूर्ण आकृति के रूप में दिखाई देती है। इसी प्रकार, मातिस की इस कृति में आकृतियों द्वारा बनाया गया गोल आकार पूर्ण नहीं है। उसमें रिक्त स्थान है, तब भी हम प्रत्यक्षीकरण के द्वारा उसे पूर्ण प्रतीत करते हैं। साथ ही निरंतरता के नियम के अनुसार आकारों को एक दिशा में घूमते चित्रित किया गया है तो दर्शक उन्हें एक समूह में संगठित करके उनका प्रत्यक्षीकरण करता है। यद्यपि उनकी गति दो आकारों के हाथों के बीच के अंतराल के कारण टूट सकती है। परंतु संगठन के प्रत्यक्षीकरण के द्वारा दर्शक उनका निरंतर गति में ही प्रत्यक्षीकरण करता है, जैसा कि चित्र 6 से स्पष्ट हो रहा है।

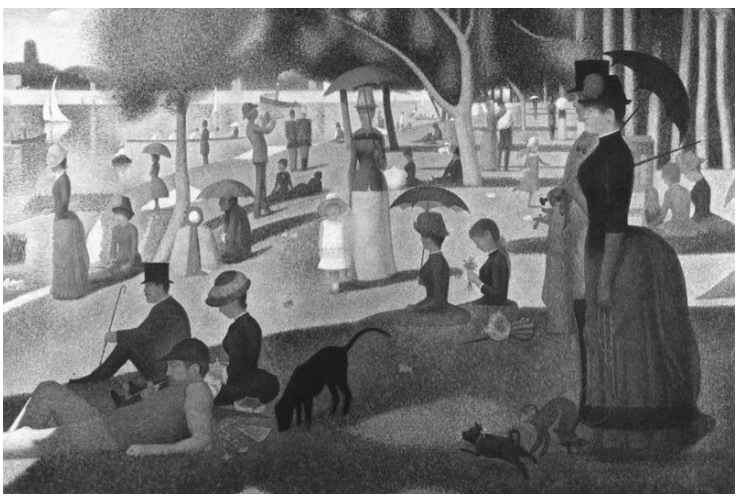

चित्र 5— जार्ज स्यूरा द्वारा निर्मित कृति
'अ संडे आफ़्टरनून ऑन द आइलैंड ऑफ़ ला ग्रेंडे'

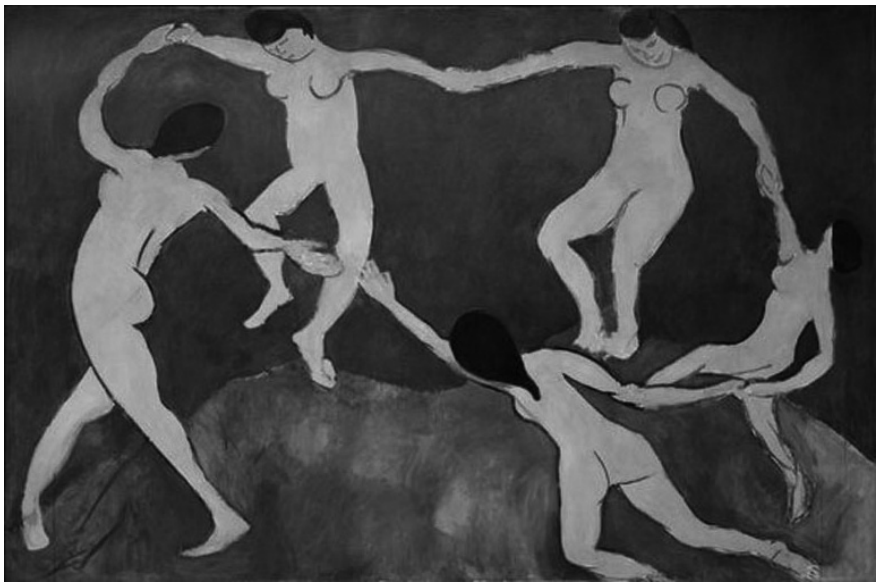

चित्र 6— हेनरी मातिस (Henry Matisse) द्वारा निर्मित कृति 'ला डांसे'

कोफ्का के अनुसार मानव प्रत्यक्षीकरण में एक प्रवृति होती है कि वह संतुलन को पसंद करता है या उसे देखना चाहता है। किसी भी असंतुलित वस्तु को देखकर वह उसके संतुलन की कामना रखता है।

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षीकरण एक सृजनात्मक शक्ति है जो 'गुड गेस्टाल्ट' की तरफ़ ले जाती है। अतः कोई भी कलाकृति स्वयं में 'गुड गेस्टाल्ट' बन जाती है। कोफ्का का यह भी मानना है कि कोई भी कलाकृति कलाकार के स्वयं की आंतरिक दुनिया का बाह्य प्रकटीकरण है। यह चित्त या कार्य की शुद्धता स्वयं में ही दर्शक को अपनी दुनिया में आमंत्रित करने की योग्यता रखती है। इसके लिए किसी अन्य उपकरण की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए कलाकार की अपने चित्र में गहन आत्मसात् होने की प्रक्रिया, उसके चित्त में उसकी दुनिया को सजीव रूप में प्रस्तुत कर पाती है। अतः कहा जा सकता है कि कलाकार द्वारा किए गए चित्रण से उसकी सृजनात्मकता का बोध होता है जो कि प्रत्यक्षीकरण द्वारा स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि देखने वाले को उसमें संपूर्णता का आभास होता है।

संदर्भ

अर्नहीम, रुडॉल्फ़. 1969. *विज़ुअल थिंकिंग*. कैलिफ़ोर्निया यूनिवर्सिटी प्रैस.

अस्थाना, विपिन. 2002. *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन*. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा.

एमर, मिकेल (संपादक). 1993. *द विज़ुअल माइंड, आर्ट एंड मैथमेटिकस*. कैंबिज, द एमआईपी प्रेस.

कुर्त्ज़, ब्रूस डी. 1987. *विज़ुअल इमेजिनेशन – एन इंट्रोडक्शन टू आर्ट*. एंगलवुड क्लिफ़्स, प्रेंटिस हॉल.

जय प्रकाश और देवी दयाल. 1973. *आधुनिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि*. मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, मध्य प्रदेश.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2005. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा— 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

वर्मा, रामपाल सिंह. 1988. *मनोविज्ञान के सम्प्रदाय*. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, उत्तर प्रदेश.

वात्स्यायन. 1992. *व्यवहारिक मनोविज्ञान*. केदारनाथ रामनाथ प्रकाशन, मेरठ.

विगन, मार्क. 2006. *थिंकिंग विज़ुअली*. ए.वी.ए. पब्लिशर्स. स्विट्ज़रलैंड.

www.enotes.com

www.wikipedia.org/wiki/visual/perception

www.jstor.org